International Journal of Multidisciplinary Trends

E-ISSN: 2709-9369
P-ISSN: 2709-9350
www.multisubjectjournal.com
IJMT 2020; 2(2): 92-94
Received: 28-06-2020
Accepted: 30-08-2020

डॉ. संध्या गौतम
सोसिएट प्रोफेसर,
आर्य गर्ल्ज कॉलेज, अम्बाला छावनी, हरियाणा, भारत

Corresponding Author:
डॉ. संध्या गौतम
सोसिएट प्रोफेसर,
आर्य गर्ल्ज कॉलेज, अम्बाला छावनी, हरियाणा, भारत

राष्ट्र भाषा और संस्कृति

डॉ. संध्या गौतम

प्रस्तावना

किसी राष्ट्र की सर्वाधिक प्रचलित एवं स्वेच्छा से आत्मसात् की गई भाषा को 'राष्ट्रभाषा' कहा जाता है। इस दृष्टि से हिन्दी भाषा ने 'राष्ट्रभाषा' होने का गौरव प्राप्त किया है। हिन्दी भाषा सदियों से भारत की मानवतावादी संस्कृति को अपने भीतर संजोए निरन्तर अपने कर्त्तव्य का निर्वाह कर रही है। इसमें युगानुरूप अपने में परिवर्तन करने, अन्य भाषाओं तथा क्षेत्रीय बोलियों के शब्दों को ग्रहण करने की अद्‌भुत क्षमता निहित है। इसमें वैज्ञानिक देवनागरी लिपि को अपनाया और सदैव अपनी जननी संस्कृत भाषा का सम्मान किया। आज हिन्दी भाषा सम्पर्क भाषा के साथ–साथ साहित्यिक रूप से भी पूर्णतः समृद्ध होकर भारत की पहचान अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बना रही है। कोई भी भाषा दो रूपों में उड़ान भरती है – जनभाषा के रूप में और साहित्य के रूप में।

हिन्दी में आदिकाल से ही समृद्ध साहित्य की जो धारा प्रवाहित हुई थी, वह आज विश्व स्तर पर अपने पंख पसार चुकी है। संकीर्ण मनोवृत्ति के राजनीतिज्ञ चाहे इस बात को स्वीकार करे या ना करे, परन्तु हिन्दी भाषा ने साहित्यिक स्तर पर भारतीय संस्कृति को सहेजने का कार्य किया है। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने भी साहित्य के विषय में लिखा है –''ज्ञान राशि के संचित कोष ही का नाम साहित्य है।''[2] हिन्दी की अपार क्षमताओं को देखते हुए ही हमारे देश के अहिन्दी प्रदेशों से आए महापुरूषों और स्वतंत्रता सेनानियों ने (महात्मा गांधी, स्वामी दयानंद सरस्वती आदि) हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने की पैरवी की। देश के स्वतंत्रता संग्राम में हिन्दी साहित्य और साहित्यकारों ने अहम् भूमिका निभाई है। भारतेन्दु हरिश्चंद्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी आदि साहित्यकारों ने अपनी लेखनी की धार से देश–भक्ति की जो अलख जगाई, वह अविस्मरणीय है।

हिन्दी साहित्य ने भारतीय संस्कृति के संरक्षण में अहम् भूमिका निभाई है। इस विषय में मुहम्मद इकबाल की ये पंक्तियाँ याद आती हैं–

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी,
सदियों रहा है दुश्मन दौरे जहाँ हमारा।
यूनान मिस्र रोमाँसब मिट गये जहाँ से,
अब तक मगर है बाकी नामोनिशाँ हमारा।

यूनान, मिस्र, रोम आदि जिन देशों की संस्कृतियाँ अत्यंत प्राचीन मानी जाती है, अब उनका नाम मात्र ही शेष बचा है। वे सब काल के गाल में समा गई, किन्तु अनेक तूफानों का सामना करते हुए भी भारतीय संस्कृति का आलोक–दीप आज भी प्रज्वलित है। युग आए और चले गए, लेकिन दीप की लौ आज तक मंद हुई हुई है। युगों ने इसके आलोक–कण ग्रहण कर स्वयं को आलोकित किया और अपने प्रकाश में वृद्धि की। इसी भारतीय संस्कृति के आलोक के विषय में गिरिजाकुमार माथुर लिखते हैं–

दीपों का यह पर्व पुरातन
सदियों से आलोक सनातन
हर युग ने इसकी लौ में
है दान किए अपने प्रकाश कण।[3]

संस्कृति मनुष्य की आध्यात्मिक, नैतिक, बौद्धिक तथा मानसिक उपलब्धियों की सूचक है। संस्कृति के अन्तर्गत किसी जाति या देश की सभी प्रकार की परम्परागत बातें, मान्यताएँ, रीति–नीति और विश्वास आ जाते हैं। संस्कृति कला–कौशल के क्षेत्र की उन्नति, सांस्कृतिक रहन–सहन और परम्परागत योग्यताओं तथा विशेषताओं के आधार पर आँकी जाती है।[4] भारतीय संस्कृति की परिभाषा देना नितान्त कठिन है। इसका कारण यह है कि भारत के लंबे इतिहास में उसकी संस्कृति पर अनेक प्रभाव पड़ते रहे हैं, जिसके फलस्वरू उसका रूप न्यूनाधिक परिवर्तित होता रहा है। भारतवर्ष अनेक जातियों, धर्मों तथा संस्कृतियों का संगत स्थल बनता रहा है।

इस सबके बाबजूद भारतीय संस्कृति की कुछ विशेषताएँ हैं, जो उसे दूसरे देशों की संस्कृतियों से भिन्न करती हैं।[5] आध्यात्मिकता, समन्वय भावना, वसुधैव कुटुम्बकं, प्रकृति–प्रेम, दमन–दया–दान ('द' की संस्कृति), शुद्ध आचरण, निष्काम कर्म, मातृदेवोभव, पितृदेवो भव, आचार्य देवो भव आदि भारतीय संस्कृति के तत्त्व सतत् मानव जीवन को विकसित तथा समृद्ध करते आए हैं। ये तत्त्व ही उसे विषम परिस्थितियों में भी जीवन जीने की कला सिखाते हैं। साधना और तपस्या जैसे तत्त्व से मनुष्य कुछ भी हासिल कर सकता है।

वास्तव में भारतीय संस्कृति मानव संस्कृति है। मानव के सूक्ष्म मनोजगत से लेकर उसके प्रत्यक्ष कर्म तक जो परिष्कार क्रम आदिम युग से चलता आ रहा है, वही मानव संस्कृति है।[6] भारतीय संस्कृति अत्यंत प्राचीन है, जहाँ प्राचीन संस्कृति होती है, वहाँ जीवन के कुछ मानवीय मूल्य होते हैं। हर नवयुग में उनकी परीक्षा करनी पड़ती है, प्रयोग में उन्हें तपाना पड़ता है, उन्हें एकाएक बदला नहीं जा सकता। भारतीय संस्कृति के मूल्य हैं– आस्था और जिजीविषा, स्वतंत्रता और दायित्वबोध, विवेक और आचरण, नैतिकता।

हिन्दी भाषा में रचित साहित्य भारतीय संस्कृति और उसके मानवीय मूल्यों की अमूल्य धरोहर है। आदिकाल में रचित (बौद्ध, नाथ, जैन) धार्मिक साहित्य ने भक्तिकालीन साहित्य के लिए आधारभूमि तैयार की है। इस साहित्य में आचरण, नैतिकता आदि को विभिन्न पात्रों के द्वारा उद्घाटित किया है। विद्यापति पदावली, पउमचरिउ तथा अमीर खुसरों की पहलेयाँ एवं गीतों ने जहां लोकरंजन किया वही उन्होंने हिन्दी भाषा के माध्यम से लोगों में आस्था–जिजीविषा, आचरण, विवेक आदि मूल्यों को जागृत करने का कार्य किया।

भक्तिकालीन हिन्दी साहित्य, आस्था और जिजीविषा, स्वतंत्रता और दायित्वबोध, विवेक और आचरण, नैतिकता, समन्वय–भावना, आध्यात्मिकता आदि से सराबोर है। कबीर, जायसी, सूरदास तुलसीदास आदि कवि आस्था के सर्जक तथा जिजीविषा के वितरक रहे हैं, क्योंकि इनके अभाव में जीवन–यापन करना संभव नहीं हो सकता। इन कवियों के चिंतन का चक्र कहीं भी घूमता रहा हो, कैसी भी समस्याओं का सामना करता रहा हो, वे आस्था के मार्ग से कभी विचलित नहीं हुए। अपनी स्वंत्रता को इन कवियों ने किसी राजनीतिज्ञ के सामने गिरवी नहीं रखा। स्वाभिमान के साथ समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह करते रहे। आचरण की शुद्धता, नैतिकता, आध्यात्मिकता, आत्मबल को अपने जीवन का आधार बताते हुए निरन्तर साहित्य सृजन में संलग्न रहे। भारतीय संस्कृति का संवाहक होने के कारण ही भक्तिकालीन साहित्य सार्वभौमिक, सार्वकालिक तथा सार्वदेशिक है, जो हृदय, मन बुद्ध और आत्मा का एक साथ स्पर्श करता है। तुलसीदास को तो समन्वय की विराट्–चेष्टा के कारण लोकनायक की संज्ञाा दी गई है।

हिन्दी के रीतिकालीन साहित्य पर अनेक आक्षेप लगाए गए, परन्तु घनानंद, बोधा, आलम, बिहारी जैसे कवियों ने भक्ति, नीति आदि से संबंधित काव्य की रचना की। भूषण और गुरू गोबिन्द जैसे कवियों ने मानव–प्रेम, देश–प्रेम से युक्त कविता का सृजन कर भारतीय संस्कृति की रक्षा करने वाले वीरों का यशोगान गाया। आधुनिक काल का साहित्य मानक हिन्दी में रचित साहित्य है। जो गद्य और पद्य दो रूपों में मिलता है। इस समय काव्य की विभिन्न धारायें प्रवाहित हुई। भारतेन्दु युग के कवियों ने देश–प्रेम, प्रकृति–प्रेम, लोक जागरण को लेकर जो गद्य–पद्य साहित्य का सृजन किया, उसमें भारतीय संस्कृति के समस्त तत्त्वों की झांकी हमें किसी न किसी रूप में दिखाई देती है। यही परम्परा निरन्तर आगे बढ़ती हुई विकास क्रम में अपनी वृद्धि करती रही। छायावादी काव्य पर मानववादी दृष्टिकोण साफ–साफ दिखाई देता है। आगे के कवियों पर राष्ट्रीय के साथ–साथ अन्तरराष्ट्रीय प्रभाव साफ–साफ दिखाई देते हैं। वर्तमान काल की निराशा, नकारात्मक परिस्थितियों में साहित्यकारों को भारतीय संस्कृति के तत्त्व और मूल्य ही आस्था का संचार करते दिखाई देते हैं। यही कारण है कि आज भी साहित्य भारतीय संस्कृति और मूल्यों की अमूल्य निधि है।

आधुनिक काल में रचित हिन्दी गद्य साहित्य–नाटक, निबंध, कहानी, उपन्यास आदि तो मानवीय मूल्यों और भारतीय संस्कृति का अपार भंडार है। आचार्य हमारी प्रसाद द्विवेदी, आचार्य रामचंद्र शुक्ल आदि के निबंध भारतीय संस्कृति का अनुपम चित्र अंकित करते हैं। उनका मानना है कि भारतीय संस्कृति लोक के प्रति त्याग, सेवा और समर्पण की संस्कृति है। लोक–कल्याण के लिए समर्पण की भावना ही समस्त भारतीय धर्म, कर्म और साधना का मूल आधार है। यह समर्पण ही जीवन की सार्थकता है और मानवता का मापदण्ड है। द्विवेदी जी समर्पण के अंतर्गत कहते हैं कि मनुष्य पर तीन प्रकार के ऋण होते हैं–पितृ ऋण,देव ऋण ऋषि ऋण। जब तक ये ऋण चुका नहीं दिए जाते, तब तक मनुय को बड़ी बात सोचने का अधिकार नहीं है। (भारतीय संस्कृति की देन) उपन्यासकारों, नाटककारों ने भारत के ऐतिहासिक गौरवमयी पात्रों के गौरवमयी जीवन गाथा को अपनी लेखनी से उकेरा, जो भारतीय संस्कृति और मानवीय मूल्यों का जीवांत चित्र चित्रित करती है। 'देख कबिरा रोया' 'मानस का हंस', 'खंजन नयन', 'रानी लक्ष्मीबाई' आदि उपन्यास इन महा विभूतियों का जीवंत चित्र प्रस्तुत करते हैं। आज वर्तमान में अनेक विधाओं के माध्यम से रचनाकार मानव संस्कृति की महिमा को साहित्य के माध्यम से वाणी प्रदान कर रहे हैं। यदि आप हिन्दी भाषा की वैज्ञानिक वर्णमाला और मात्राओं को भी ध्यान से देखें तो उसमें भी हमारी संस्कृति के संस्कार स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं।

अतः हिन्दी भाषा में रचित साहित्य मानव जीवन की सार्थकता और असीम सम्भावनाओं के विकास के लिए समन्वय पर बल देता है, क्योंकि सत्य, ज्ञान और कर्म, व्यक्ति और समाज, सभ्यता और संस्कृति, प्राचीनता और नवीनता, शिक्षा, साहित्य और कला, साधना और तपस्या, कथनी और करनी के समन्वय द्वारा ही मानव जीवन को उत्कृष्ट बनाया जा सकता है। पंडित नेहरू कि यह बात उल्लेखनीय है कि जिस वृक्ष की जड़ें जमीन में नहीं होती वह उखड़ जाता है। साथ ही जिस वृक्ष को खुली हवा नहीं मिलती वह पेड़ बौना रह जाता है।[7] हिन्दी साहित्यकारों ने परम्परा को आंख मूँद कर स्वीकार नहीं किया अपितु अपने विवेक द्वारा युग की माँग के अनुकूल उसकी जीवन्तता पर बल दिया है। महादेवी वर्मा ने अपने दीक्षांत भाषण में संस्कृति के इसी मूल तत्त्व के विषय में कहा है कि– ''बादल समुद्र से जल लाता है, समुद्र का क्षार नमक गठरी भरकर नहीं ले जाता। उसमें जो माधुर्य है, जो मधुर जल है वही लाता है।'' हिन्दी भाषा भारतीय संस्कृति की संवाहक है, इसमें तनिक संदेह नहीं। अन्तरराष्ट्रीय पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी भाषा और भारतीय संस्कृति विश्व पटल पर अपनी पहचान बना रही है।

संदर्भ ग्रंथ

1. जैन योगेश चंद, निबंधमाला, दिल्ली, अरिहन्त पब्लिकेशन इंडिया लिमिटिड। पृ. 208
2. द्विवेदी, महावीर प्रसाद, साहित्य की महत्ता, अशोक के फूल निबंध संग्रह।
3. वर्मा, मान सिंह, अभिनव हिन्दी निबंध, मेरठ, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस। पृ. 121
4. वर्मा, आचार्य रामचंद्र, शब्दार्थ विचार कोश, दिल्ली, राजपाल एण्ड संज, कश्मीरी गेट। पृ. 498
5. वर्मा, धीरेन्द्र (सं.) हिन्दी साहित्य कोश, भाष–1, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी। पृ. 869

6. वर्मा, महादेवी, मेरे प्रिय संभाषण, नयी दिल्ली, नैशनल पब्लिशिंग हाउस, 23 दरियागंज।
7. गौतम, संध्या, अमृतलाल नागर के उपन्यासों में मानववाद, दिल्ली, सूर्य भारती प्रकाशन नई सड़क। पृ. 213